बेहतर आर्थिक उन्नति का आधार

आलू उपजाएं
लाभ कमाएं

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

कृषि विज्ञान केन्द्र

रायगढ़ - 496001 (छ.ग.)

Phone No. : 07762-291119, E-mail : kvkraigarh@yahoo.com

KVK/Pub/2017-18/01

आलू उत्पादन की उन्नत तकनीक

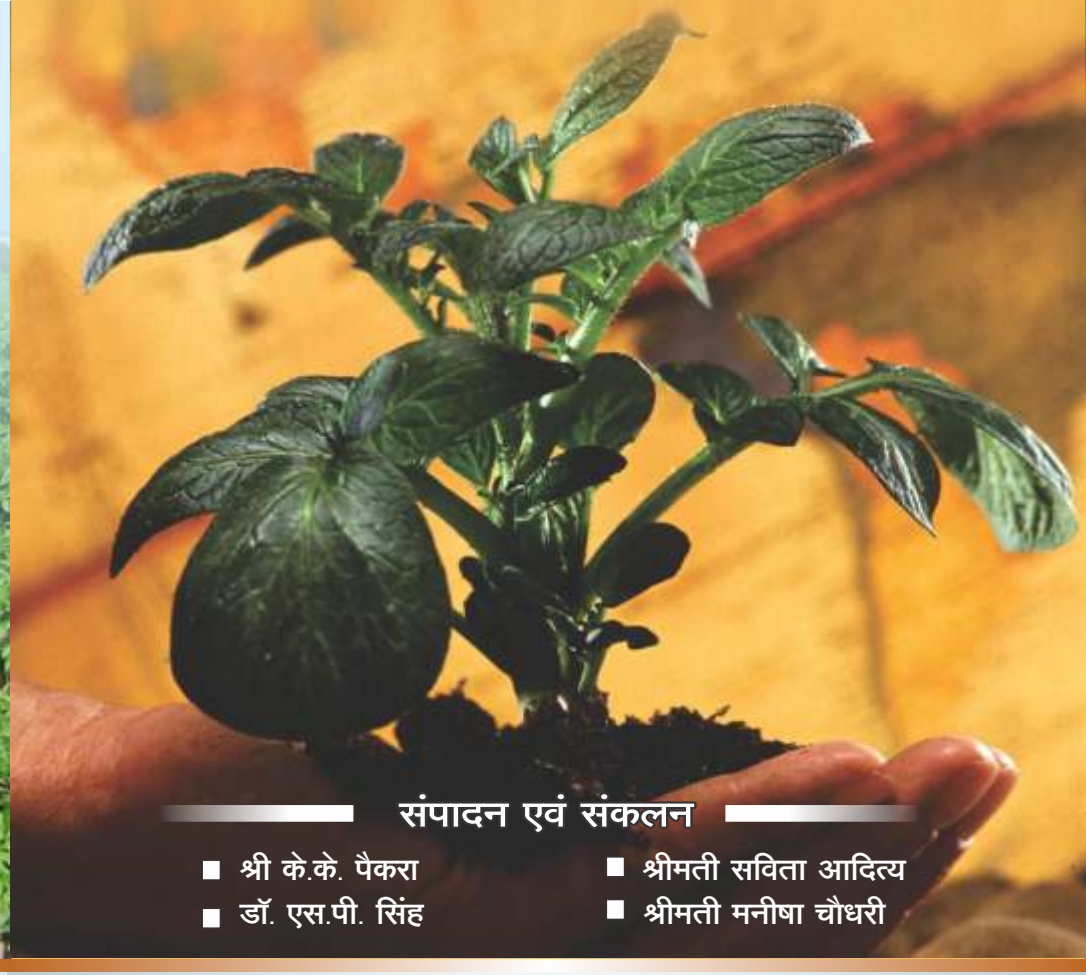

संपादन एवं संकलन

- श्री के.के. पैकरा
- डॉ. एस.पी. सिंह
- श्रीमती सविता आदित्य
- श्रीमती मनीषा चौधरी

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

कृषि विज्ञान केन्द्र

रायगढ़ - 496001 (छ.ग.)

Phone No. : 07762-291119, E-mail : kvkraigarh@yahoo.com

संरक्षक

डॉ. एस.के.पाटिल
माननीय कुलपति
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मार्गदर्शक

डॉ. ए. एल. राठौर
निदेशक विस्तार सेवाएं
इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

प्रेरणा स्त्रोत

डॉ. अनुपम मिश्रा
निदेशक
कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान
अंचल - 9, जबलपुर (म.प्र.)

प्रधान संपादक

डॉ. एस.पी.सिंह
वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं प्रमुख
कृषि विज्ञान केन्द्र, रायगढ़ (छ.ग.)

इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)
कृषि विज्ञान केन्द्र, रायगढ़ (छ.ग.)
फोन : 07762-291119,
E-mail - kvkraigarh@yahoo.com

आलू उत्पादन की उन्नत तकनीक

आालू भारत का सबसे महत्वपूर्ण फसल है। आलू के उत्पादन में विश्वभर में चीन के बाद भारत का दूसरा स्थान है। तमिलनाडु एवं केरल को छोड़कर आलू पूरे देश में उगाया जाता है आलू को सब्जियों का राजा कहा जाता है। आलू की औसत पैदावार 152 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है, जो विकसित देशों की तुलना में बहुत कम है, जिसके कई कारण हैं उनमें उन्नत किस्मों के स्थान पर परम्परागत किस्मों को उगाना, रोग रहित बीजों की उपलब्धता बहुत आवश्यक है। इसके अलावा उर्वरकों का प्रयोग, सिंचाई की व्यवस्था तथा रोग नियंत्रण के लिये दवा के प्रयोग का भी उपज पर गहरा प्रभाव पड़ता है। आलू की फसल लेने हेतु छत्तीसगढ़ के तीनों कृषि जलवायु क्षेत्र उपयुक्त है। छत्तीसगढ़ में आलू की फसल लगभग 32,928 हेक्टेयर क्षेत्रफल में ली जाती है, जिससे लगभग 32,059 टन उत्पादन प्राप्त होता है। प्रति इकाई अधिकतम उत्पादन प्राप्त करने के लिये उन्नत किस्में और वैज्ञानिक विधि अपनाकर किसान भाई अधिक पैदावार ले सकते है।

जलवायु :– आलू की अधिकतम पैदावार के लिये ठण्डा जलवायु की आवश्यकता होती है। फसल को विभिन्न अवस्थाओं में निम्नानुसार की आवश्यकता होती है।

01. पौधों के सर्वोत्तम विकास हेतु (शुरू की अवस्था में) – 25 डिग्री सेल्सियस

02. बाद में उचित विकास हेतु – 18 डिग्री सेल्सियस

लगभग 30 डिग्री सेल्सियस तापमान होने पर कन्द का उत्पादन पूरी तरह रूक जाता है। सिंचित अवस्था में आलू की खेती के लिये छत्तीसगढ़ की जलवायु एवं मृदा उपयुक्त है। आलू की फसल लेने हेतु छत्तीसगढ़ के पहाड़ी तथा मैदानी कृषि जलवायु क्षेत्र उपयुक्त है।

भूमि :– आलू को विभिन्न प्रकार की मिटट्ी में उगाया जा सकता है, परन्तु इसकी अधिक पैदावार लेने के लिए उचित जल निकासी कार्बनिक पदार्थो से भरपुर बलुई दोमट मिटट्ी (5.2 से 6.5 पी.एच. मान) सर्वोत्तम मानी गयी है। खेती के क्षारीय तथा जल भराव वाले भूमि का चुनाव नही करना चाहिये।

खेत की तैयारी एवं लगाने का तरीका :– खेत की जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करनी चाहिये । उसके उपरान्त 3 से 4 जुताई देशी हल या ट्रेक्टर से जुताई करना चाहिये। आलू जमीन के अन्दर जाने वाली फसल होने के कारण खेत को

भुरभुरा करना आवश्यक है इसलिये हर जुताई के बाद पाटा चलाना चाहिये एवं आखिरी जुताई के पहले 250 से 300 क्विंटल प्रति हेक्टेयर अच्छी सड़ी हुई गोबर की खाद खेत में फैलाकर मिला देना चाहिये। खेत में 60 से.मी. के अन्तराल पर 10 से 12 से.मी. उँची मेड़ें बना लें। मेड़ों को देशी हल या मेड़ बनाने वाले यंत्र (रीजर) से बनाया जा सकता है। इन्हे संकीर्ण पाटे या फावड़े से भी बनाया जा सकता है। इन मेड़ों पर आलू के कन्दों को मेड़ों के शिखर पर खुरपी की सहायता से 5 से 7 से.मी. की गहराई पर लगाना चाहिये।

बीज का आकर एवं लगाने की दूरी :– अच्छी पैदावार के लिये स्वस्थ बीज का उपयोग करना अति अवाश्यक है। 25 ग्राम से 100 ग्राम के कन्द बीज के रूप में उपयोग कर सकतें है। इनकी मोटाई 25 से 65 मि.मी. तक रहती है। आलू के कन्दों को उनके वजन के अनुसार निम्नलिखित तालिका के दर्शाये अनुसार उचित दूरी पर लगाएँ :–

क्र.	बीज / कन्द का वजन	लगाने की दूरी		बीज दर क्विं. प्रति हेक्टेयर
		कतार से कतार (से .मी.)	पौधे से पौधा (से.मी.)	
01.	25 से 30	60	10	19 से 23
02.	30 से 50	60	20	25 से 41
03.	50 से 60	60	30	27 से 33
04.	60 से 100	60	40	25 से 42

बुवाई का समय :– छत्तीसगढ़ के मैदानी क्षेत्रों में आलू की बुवाई 15 अक्टूबर से 15 दिसम्बर है तथा खरीफ फसल के रूप में जुलाई के प्रथम सप्ताह से द्वितीय सप्ताह उचित समय है।

उन्नत किस्मों का चयन :– आलू की खेती छत्तीसगढ़ प्रान्त में लगभग सभी क्षेत्रों जैसे– सरगुजा जिले के मैनपाट, सामरीपाट एवं जोगीपाट पहाड़ी क्षेत्र (खरीफ में), रायगढ़, जशपुर, कोरिया, सरगुजा, रायपुर, बिलासपुर, बस्तर, महासमुन्द, दुर्ग एवं धमतरी आदि क्षेत्रों में रबी में इसकी खेती की जाती है परन्तु इस फसल से होने वाली आमदानी को देखते हुये वर्तमान में इसकी खेती समूचे छत्तीसगढ़ में सिंचित दशा में की जाती है। अतः किस्मों चयन जलवायु के अनुसार किया जाना अत्यन्त लाभप्रद होगा। आलू की किस्मों को सामान्यतः अवधि के अनुसार तीन भागों में विभक्त किया गया है।

विश्वविद्यालय द्वारा अनुसंधान परीक्षणों के आधार पर निम्नलिखित किस्में इस मौसमी क्षेत्र तथा प्रान्त के लिये उपयुक्त एवं अनुशंसित की गई है।

क्र.	अवधि का प्रकार	पकने का अवधि
01.	अतिशीघ्र	60 से 75 दिन
02.	शीघ्र अवधि	75 से 90 दिन
03.	मध्यम अवधि	90 से 120 दिन

आलू की उन्नत खेती

सब्जी वाली किस्में :–

क्र.	किस्में	पकने की अवधि	विशेषताएँ	पैदावार क्विं./हे.
01.	कुफरी अशोका (हाइब्रिड पी .जे. 376)	60 से 75 दिन	यह 1996 में विकसित किस्म है, जिसके कंद गोलाकार, आखें उभारयुक्त तथा 5 से 8 कंद प्रति पौधा प्राप्त होता है। यह पछेती झुलसा रोग के लिये प्रतिरोधी है।	200 से 250
02.	कुफरी जवाहर (हाइब्रिड जे.एच. 222)	75 से 90 दिन	यह 1996 में विकसित किस्म है। अंकुर का रंग बैंगनी, पौधे सघन शाखायुक्त, फूल सफेद तथा मध्यम फैलने वाले होते है। कंद सफेद, मध्यम गोल अण्डाकार, चिकनी सतह तथा उभरी आखों वाले होते है। गूदा हल्का पीला क्रीम रंग का होता है। यह पछेती झुलसा रोग के लिये प्रतिरोधी है।	220 से 250
03.	कुफरी पुखराज (हाइब्रिड जे .ई. एक्स. /सी. 166)	75 से 100 दिन	यह 1996 में विकसित किस्म है। अंकुर का रंग बैगनी, पौधे मध्यम सधन, पत्तियां अण्डाकार नुकीली तथा लम्बी होती है। इसका तना मोटा अधिक शाखायुक्त होता है। कंद बड़े, सफेद, अण्डाकार हल्का चपटापन लिये चिकनी एवं उथली आखों वाले होते है। यह पछेती झुलसा रोग के लिये प्रतिरोधी है।	350 से 370
04.	कुफरी ख्याति (हाइब्रिड जे. /93–86)	90 से 110 दिन	यह 2008 में विकसित किस्म है। पौधे गुच्छेदार, मांसलपत्तीयुक्त तथा तना मध्यम मोटा होता है। कंद अण्डाकार चपआपन लिये हुये, गूदा सफेद तथा आखें मध्यम दबी हुई होती है। छत्तीसगढ़ के तीनों कृषि जलवाय के उपयुक्त है। यह पछेती झुलसा रोग के लिये प्रतिरोधी है।	280 से 340
05	कुफरी पुष्कर (हाइब्रिड जे . डब्ल्यू – 160)	90 से 100 दिन	यह 2004 में विकसित किस्म है। अंकुर का रंग बैगनी–नीला, पौधे शीघ्र बढ़ने वाली ऊंची, पत्तियाँ मांसल व लम्बी तथा तना मोटा होता है। कंद मध्यम अण्डाकार गोल, आखें सफेद उभरायुक्त गहराई लिये हुये होती है।	240 से 260
06.	कुफरी बादशाह	115 से 130 दिन	यह किस्म अगेती, पेछोती अंगमारी तथा कुछ हद तक विषाणु जनित रोग प्रतिरोधी है। यह किसी भी परिस्थितियों में उगाई जा सकती है। कंद बड़े, चिकने तथा अण्डाकार होते हैं। कंद सफेद, आकर्षक और अधिक मोडयुक्त होता है।	250 से 300
07.	कुफरी सिन्दुरी (लाल कंद)	120 से 140 दिन	पहाड़ी क्षेत्रों के लिये यह देरी से पकने वाली किस्म है। इसके मध्यम आकार के एक जैसे हल्के लाल होते है। इसके कंदों का विघटन बहुत तेजी से होता है। यह पाले को सहन करने वाली किस्म है।	200 से 250

कृषि विज्ञान केन्द्र, रायगढ़ (छ.ग.)

प्रसंस्करण के लिये उपयुक्त किस्में :-

क्र.	किस्में	पकने की अवधि	विशेषताएँ	पैदावार / हे.
01.	कुफरी चिपसोना-1		यह चिप्स बनाने के लिये उपयुक्त है। इसके पौधे कम फैलने वाले मध्यम, लम्बे तथा सीधे बढ़ने वाले बहुशाखायुक्त होते है। फूल सफेद, तना मोटा, कंद एवं गूदा सफेद, शुष्क पदार्थयुक्त (20 से 22 प्रतिशत), कन्द अण्डाकार लम्बे, सतह चिकनी, आँखें मटमैली उभरी हुई होती है। अंकुरण क्षमता 85 से 92 प्रतिशत तक होती है।	200 से 250
02.	कुफरी चिपसोना-2	मध्यम से देर	यह मध्यम से देर अवधि वाली चिप्स के लिये उपयुक्त है। इसके पौधे मध्यम उँचाई लिये हुये सीधे बढ़ने वाले होते है। फूल सफेद, हल्का नीला, पत्तियाँ कम चौड़ी तथा नुकीली एवं माँसल होती है। कन्द मध्यम गोल तथा अण्डाकार एवं चिकनी सतह वाले होते है। यह किस्म पछेती झुलसन रोग के लिये अवरोधी तथा पाला हेतु सहनशील किस्म है। इसकी अंकुरण क्षमता 85 से 90 प्रतिशत होती है। शुष्क पदार्थ की मात्रा 20 से 21 प्रतिशत तक होती है।	170 से 230
03.	कुफरी चिपसोना-3	मध्यम से देर	यह मध्यम से देर अवधि में तैयार होने वाली किस्म है। इसके पौधे मध्यम उँचे तथा सीधे बढ़ने वाले सघन पत्तियाँ सँकरी, नुकीली, माँसल तने पतले तथा ठोस होते है। कन्द सफेद मध्यम, गोल, चपटापन लिये हुये अण्डाकार तथा कुछ लम्बी सतह, चिकनी एवं चपटी आँखों वाले होते है। इसकी अंकुरण क्षमता 80 से 85 प्रतिशत एवं शुष्क पदार्थ की मात्रा 21 से 22 प्रतिशत तक होती है।	200 से 220
04.	कुफरी सूर्या	मध्यम	यह अधिक उत्पादन देने वाली तथा बड़े कन्दों वाली किस्म है जो चिप्स तथा फ्रेन्च फ्राई उत्पाद बनाने के लिये सर्वापयुक्त है। पौध सीधा बढ़ने वाला, पत्तियाँ लम्बी एवं नुकीली, पुष्प सफेद – नीला रंग लिये हुये तथा तना मोटा होता है। इसकी अंकुरण क्षमता 75 से 85 प्रतिशत एवं शुष्क पदार्थ की मात्रा 20.5 से 22 प्रतिशत तक होती है। अधिक तापमान सहने वाली एवं छत्तीसगढ़ के मैदानी क्षेत्र हेतु अति उपयुक्त है।	230 से 275

आलू की उन्नत खेती

बीज की मात्रा :– बीज की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि उसके लिए कंद कितने ग्राम का उपयोग किया जाता है। यदि 30–40 ग्राम का आलू लिया जा रहा है तो एक हेक्टेयर के लिये 30–40 क्विंटल बीज की आवश्यकता होती है।

बीजोपचार :– कन्दों का आकार कई बार बड़ा होने के कारण काटकर लगाया जाता है लेकिन पूरे कंद लगाने से उपज अच्छी मिलती है। कन्दों को लगाने से पूर्व डायथेन एम.–45 (2 से 2.5 ग्राम) अथवा कार्बेन्डाजिम (1 से 1.5 ग्राम) प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर कन्दों को 20 मिनट तक डुबोएँ। एक बार किया हुआ घोल तीन बार कन्द डुबोने के लिये या कन्दों के उपचार के लिये उपयोग में लाया जा सकता है। तत्पश्चात घोल को आलू के खेत में छिड़क दें।

खाद एवं उर्वरक :– आलू फसल में मुख्य पोषक तत्व नत्रजन, फास्फोरस व पोटाश है। नत्रजन से फसल की वानस्पतिक बढ़वार अधिक और पौधे के कंदमूल के आकार में वृद्वि होती है परन्तु उपज की वृद्वि में कंदमूल के अलावा उनकी संख्या का अधिक प्रभाव पड़ता है। फसल के आरम्भिक विकास और वानस्पतिक भागों को शक्तिशाली बनाने में पोटाश सहायक होता है। इससे कंद के आकार व संख्या में बढ़ोत्तरी होती है। आलू की भरपूर उपज लेने के लिए मृदा जांच के आधार पर खाद एवं उर्वरकों का उपयोग करें। यदि किसी कारणवश मृदा जांच न हो पायें तो उस स्थिति में प्रति हेक्टेयर निम्न मात्रा में खाद एवं उर्वरक अवश्य डालें :

गोबर की खाद – 15–20 टन

नत्रजन – 120–150 कि.ग्रा.

फासफोरस – 80 कि.ग्रा

पोटाश – 80–100 कि.ग्रा.

गोबर की खाद प्रथम जुताई से पूर्व खेत में समान रुप से बिखेर कर मिटटी पलटने वाले हल से जुताई करें। बुवाई के समय नत्रजन की आधी मात्रा एवं

कृषि विज्ञान केन्द्र, रायगढ़ (छ.ग.)

फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा डालनी चाहिये। नत्रजन की शेष आधी मात्रा बुवाई के 30–35 दिन बाद मिटट्री चढ़ाने के पूर्व व सिंचाई देने के बाद देना चाहिये।

सिंचाई :– आलू की फसल उथली जड़ वाली है। अतः हल्की व जल्दी सिंचाई की आवश्यकता होती है परन्तु खेत में पानी कभी भी भरा हुआ नही रहना चाहिये। सिंचाई करते समय इस बात का विषेश रुप से ध्यान रखें कि कूडों या नालियों में मेंढ़ों की उँचाई के तीन चौथाई से अधिक उँचाई नही भरना चाहिये। आलू अच्छी नमी वाली भूमि में ही लगायें एवं सिंचाई पौध उग आने के लगभग 15–20 दिन बाद करें। दूसरी सिंचाई उसके 15 दिन बाद करना चाहिये। कंदमूल बनने व फूलने के समय पानी की कमी का उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इन अवस्थाओं में पानी 10 से 12 दिन के अन्तराल पर दिया जाना चाहिये तथा आलू खोदने से 10 दिन पहले सिंचाई बंद कर देना चाहिये। सिंचाई की संख्या एवं अन्तर भूमि, किस्म और मौसम पर निर्भर करती है। सामान्यतः 6 से 8 सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। इसकी खेती के लिये टपक सिंचाई विधि भी वरदान साबित हो रही है। इससे पैदावार में भी बढ़ोत्तरी होती है तथा पानी की बचत, खरपतवार नियंत्रण एवं घुलनशील उर्वरक डालने भी आसानी होती है। जिससे उत्पादन लागत में कमी आती है।

खरपतवार नियंत्रण :– आलू की फसल में अधिक पैदावार लेने के लिए खरपतवार नियंत्रण आवश्यक है क्योकि वे नमी, पोषक तत्वों आदि से प्रतिस्पर्धा करते हैं, जिसके कारण फसल की बढ़वार, विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है साथ ही पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके लिए खरपतवारों को खुरपी से निकालते रहना चाहिये अथवा नीचे तालिका में दिये गये खरपतवारनाशियों में से किसी का भी प्रयोग कर सकते है।

आलू की उन्नत खेती

क्र.	खरपतवारनाशी का नाम	प्रति एकड़ डालने की मात्रा		डालने का समय	रिमार्क
		सक्रिय तत्व (ग्राम)	संरचना (मि.ली.ग्राम)		
01.	पेन्डिमेथलीन 30 ई.सी. (स्टाम्प, क्रॉस, पेंडिस्टार)	300 से 400	1000 से 1200	बोनी के 0 से 3 दिन बाद	ये चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार जैसे छोटी दुधी, जंगली चौलाई, चिनीयारी, बथुआ, चनौरी, ढेकना, सेंजी, कृष्णनील आदि और सकरी पत्ती वाले खरपतवार जैसे सांवा आदि पर नियंत्रण करता है।
02.	पेन्डिमेथलीन 37.8 सी.एस. (स्टाम्प, एक्स्ट्रा)	264.6	700	बोनी के 0 से 3 दिन बाद	ये भी चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार जैसे छोटी दुधी, जंगली चौलाई, चिनीयारी, बथुआ, चनौरी, ढेकना, सेंजी, कृष्णनील आदि और सकरी पत्ती वाले खरपतवार जैसे सांवा आदि पर नियंत्रण करता है।
03.	मेट्रिब्यूजीन (सेंकोर व टाटामेट्री)	210	300	बोनी के पूर्व या तुरन्त बाद	ये सकरी और चौड़ी पत्ती के खरपतवारों को नियंत्रित करता है। इस दवा का आलू बोने के 3 से 4 दिन बाद प्रयोग करना चाहिये।
04.	ब्यूटाक्लोर (मेचेटी, तीर धानुक्लोर)	400 से 500	800 से 1000	बोनी के 3 से 4 दिन बाद	ये सकरी और चौड़ी पत्ती के खरपतवारों को नियंत्रित करता है।
05.	आइसोप्रोटयूरान (आइसोगार्ड)	300 से 400	400 से 500 (75 डब्ल्यू पी.) 600 से 800 (50 डब्ल्यू पी.)	बोनी के पूर्व या बाद में	ये सकरी और चौड़ी पत्ती के बहुत से चुनिदा खरपतवारों को नियंत्रित करता है। आलू में मिट्टी चढ़ाने के बाद इसका प्रयोग अधिक उपयुक्त है।

मिटट्री चढ़ाना :– आलू में मिटट्री चढ़ाने का विषेश महत्व है। अतः फसल की बुवाई के 30–35 दिन बाद सिंचाई और नत्रजन की शेष मात्रा डालने के उपरान्त मेढ़ों पर मिटट्री आवश्य चढ़ायें।

आलू की खुदाई :– आलू की खुदाई उसकी प्रजाति और उगाये जाने के उद्धेश्य पर निर्भर करता है। यदि आलू के कन्दों को खुदाई पश्चात सीधे बाजार में बिक्री हेतु भेजना हो तो क्यूरिंग की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यदि भंडारण या देरी बिक्री करना हो तो कन्दों की क्यूरिंग की आवश्यक है। इसके लिये जब पत्तियाँ सूखने लगे तब खुदाई से लगभग 15 दिन पहले शाखायें भूमि की सतह से काट देनी चाहिये। ऐसा करने से आलू का छिलका कठोर हो जाता है और कन्द खराब नही होती। कच्चे आलू की खुदाई करने से उसके कन्द सिकुड़ जाते है। खुदाई के समय

कृषि विज्ञान केन्द्र, रायगढ़ (छ.ग.)

ध्यान रखें कि आलू कम से कम कटे। उपलब्धता के अनुसार आलू के कन्दों की खुदाई यांत्रिक रूप से करने के लिये पोटेटो हारवेस्टर या मूंगफली हारवेस्टर का उपयोग किया जा सकता है जिससे कन्दों की खुदाई में मजदूरों पर लगने वाली लागत में काफी कमी की जा सकती है।

उपज :– आलू की उपज उसकी उगाई जाने वाली जाति व फसल की देखभाल आदि पर निर्भर करती है। सामान्य रूप से अगेती जातियों से औसतन 200 से 250 क्विंटल एवं पछेती जातियों से 300 से 350 क्विंटल उपज प्राप्त की जा सकती है।

आलू की फसल में कीट–पतेगें, सुत्रकृमि तथा बीमारियाँ :–

खेतों एवं भंडारगृह में लगने वाले रोग एवं कीट आलू को बहुत नुकसान पहुँचाते हैं। गंभीर संक्रमण की स्थिति में आलू का फसल को कीटों द्वारा 40 से 50 प्रतिशत तक नुकसान होता है। आलू की खेती के दौरान इस पर कई प्रकार के कीट का आक्रमण होता है। यदि हमें फसल की ज्यादा पैदावार चाहिये तो उसके लिये इन कीटों का प्रबंधन बहुत ही आवश्यक है।

कीट :– आलू की फसल में मुख्यतः कन्द वाले शलभ, कटुआ एवं कुतरने वाले कीट जैसे जैसिड व माहू अधिक क्षति पहुँचाते है। वे कन्द को खाते है एवं पत्तियों और तनों का रस चूसते है जिनके कारण पत्तियों के भोजन निर्माण में बाधा उत्पन्न होंती है जिसके कारण पैदावार पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

माहूं या चेंपा (Aphids) :– यह कीट एक सर्वव्यापी व बहुभक्षी है। यह पौधें के पत्तियों से रस चूसकर प्रत्यक्ष रूप से तो नुकसान पहुँचाता ही है परन्तु इससे भी ज्यादा नुकसान अप्रत्यक्ष रूप से फसल में विषाणु (वायरस) का प्रसारण करने में सहायक होता है। इसके द्वारा फैलाई जाने वाली विषाणु का बीमारियाँ पत्ती मोड़क (PLRV) व पोटेटो वायरस प्रमुख है। इन वायरस रोगों से फसल को भारी नुकसान होता है। फसल पर माहूं की मानिटरिंग से इसके द्वारा बीज व फसल में बढ़ने वाले वायरस आपतन को कम किया जा सकता है। फसल या खेतों में माहूं के प्रभाव को आँकने के लिये उनकी गिनती 100 यौगिक पत्तियों पर प्रति सप्ताह की जाती है। यदि इनकी संख्या 20 माहूं /100 पत्ती हो जाये तो इस पर रसायन का छिड़काव जरूरी हो जाता है।

आलू की उन्नत खेती

नियंत्रण :– इसके नियंत्रण हेतु इमिडाक्लोरप्रिड 150 एम.एल. या डायमेथेएट 30 ई.सी. या मेटासिस्टाक्स 25 ई.सी. 750 मि.ली. प्रति हेक्टेयर की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें। आवश्कतानुसार 12 से 15 दिनों के अंतराल पर 2 – 3 बार छिड़काव करें।

शलभ (Tuber Moth) :– इस कीट के इल्लियाँ पत्तियों के अन्दर तथा कोमल शाखाओं और तनों में सुरंग बनाती है। कन्दों में छिद्र बनाकर अंदर घुस जाती है और आन्तरिक भाग को खाकर नष्ट कर देती है। खड़ी फसल के साथ–साथ भण्डार गृहों में भी बहुत नुकसान पहुँचाती हैं।

इल्ली

वयस्क कीट

नियंत्रण :– इसके नियंत्रण हेतु कार्बरिल 50 डब्ल्यू. पी. का 0.1 प्रतिशत की दर से भण्डारण के पहले छिड़काव करें। गोदाम में आलू रखने के पूर्व क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. 0.1 प्रतिशत की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें

कृषि विज्ञान केन्द्र, रायगढ़ (छ.ग.)

कटुवा :– इस कीट के इल्लियाँ पौधे को भूमि के सतह से काट देता है। यदि खेत में जगह –जगह कूड़ा – कचरा हो तो इसकी इल्लियाँ अक्सर उसमें छुपी रहती हैं। अतः खेत को साफ रखने से कीट कम किये जा सकते हैं।

नियंत्रण :– इसके प्रभावी नियंत्रण हेतु खेत में कीट नजर आते ही क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. 0.1 प्रतिशत की दर से घोल बनाकर फसल पर छिड़काव करें अथवा फोरेट 10 जी. दानेदार 10 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से पौधों के चारों ओर डालें व सिंचाई करें।

सफेद सूँडी :-

जैसिड :– नर्म शरीर वाले हरे रंग के कीट होते है जो पौधों के पत्तों और अन्य कोमल भगों का रस चूस लेते है।

इपिलेक्ना बीटल :– यह कीट पत्तियाँ तथा कन्द दोनों को नुकसान पहुँचाते हैं।

नियंत्रण :– इसके नियंत्रण हेतु प्रभावित भागों पर कार्बरिल 50 डब्ल्यू. पी. का 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें।

फली बीटल :– यह कीट वानस्पतिक वृद्धि के समय पत्तियों को खाते हैं।

नियंत्रण :– इसके नियंत्रण हेतु प्रभावित भागों पर कार्बरिल 50 डब्ल्यू. पी. का 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें।

जड़ गांठ सुत्रकृमि (Root Knote Nematode) :– प्रभावित पौधें की पत्तियाँ सामान्य पौधें की पत्तियों से बड़ी हो जाती है पौधों की बढ़वार रूक जाती है तथा गर्म मौसम में रोगी पौधे सूख जाते हैं। जडों में अत्याधिक गांठे हो जाती हैं। जडों की दरारों में प्रायः दूसरे सूक्ष्मजीव जैसे फफूंद, जीवाणु आदि का आक्रमण होता है। बचाव के लिये फसल चक्र में मोटे अनाज वाली फसलों को लाना चाहिये। गर्मी में 2 से 3 बार अच्छी व गहरी जुताई करनी चाहिये। बुवाई से पहले कार्बोफ्यूरान का 2 किलोग्राम सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में डालना चाहिये।

आलू की उन्नत खेती

पौध संरक्षण उपाय :– आलू की फसल पर विभिन्न प्रकार के कीट व रोगों का प्रकोप होती है। कीट एवं रोगों की समय पर रोकथाम करके अधिक एवं उच्च गुणवत्ता वाले कंद प्राप्त किये जा सकते है।

रोग :–

अगेती अंगमारी (Early Blight) :– यह रोग फफूंदी के कारण होता है, जिसके कारण पत्तियों पर गहरे भूरे रंग के धब्बों का निर्माण हो जाता है। जो अनुकूल मौसम पाकर पत्तियों पर फैलने लगते हैं जिससे पत्तियाँ नष्ट हो जाती है जिसके कारण पौधे अपना भोजन नही बना पाते हैं और परिणाम स्वरुप उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इसके लक्षण आलू में भूरे रंग के धब्बे जो बाद में फैल जाते हैं जिससे आलू खाने योग्य नही रहता है।

नियंत्रण के उपाय :– बुवाई के पूर्व खेत की सफाई कर पौधों के अवशेषों को एकत्र कर जला या भूमि में गहरा दबा देना चाहिये। रोग प्रतिरोधक जाति जैसे कुफरी सिंदूरी, कुफरी अशोका, कुफरी पुखराज व कुफरी जवाहर आदि किस्मों का चयन करना चाहिये। कन्दों को लगाने से पूर्व डायथेन एम.–45 (2 से 2.5 ग्राम) या ब्लॉइटाक्स 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर कन्दों को 20 मिनट तक डुबाकर उपचारित करना चाहिये। डायथेन एम–45 जड़ –78 या ब्लॉइटाक्स 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर भली भॉति पत्तियों पर छिड़के, ताकि पत्तियां दोनों ओर से भीग जायें तथा जरूरत पड़ने पर 12 से 15 दिन के अन्तराल में 3 बार छिड़काव करें।

पछेती अंगमारी (Late Blight) :– यह रोग भी एक प्रकार की फफूंदी के कारण होता है। पत्तियों के किनारे पर छोटे भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते है। मौसम में अधिक आर्द्रता होने या बादल होने पर यह रोग तीव्र गति से फैलता है।

कृषि विज्ञान केन्द्र, रायगढ़ (छ.ग.)

नियंत्रण के उपाय :– बुवाई के पूर्व खेत की सफाई कर पौधों के अवशेषों को एकत्र कर जला या भूमि में गहरा दबा देना चाहिये। रोग प्रतिरोधक जाति जैसे कुफरी सिंदूरी, कुफरी अशोका, कुफरी पुखराज व कुफरी जवाहर आदि किस्मों का चयन करना चाहिये। कन्दों को लगाने से पूर्व डायथेन एम.–45 (2 से 2.5 ग्राम) या ब्लॉइटाक्स 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर कन्दों को 20 मिनट तक डुबाकर उपचारित करना चाहिये। डायथेन एम–45 जड़ –78 या ब्लॉइटाक्स 2 ग्राम प्रति लीटर पानी में मिलाकर भली भॉति पत्तियों पर छिड़के, ताकि पत्तियां दोनों ओर से भीग जायें तथा जरूरत पड़ने पर 12 से 15 दिन के अन्तराल में 3 बार छिड़काव करें।

भूरा विगलन रोग एवं जीवाणु म्लानी रोग (Brown Rust) :– यह जीवाणु जनित रोग है। रोग ग्रसित पौधे सामान्य पौधों से बौने होते है। जो कुछ ही समय में हरे के हरे ही मुरझा जाते है। प्रभावित पौधों की जड़ों को काटकर कॉच के गिलास में साफ पानी में रखने से जीवाणु रिसाव स्पष्ट देखा जा सकता है। अगर इन पौधों में कंद बनता है तो काटने पर एक भूरा घेरा देखा जा सकता है।

नियंत्रण के उपाय :– ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई व प्रमाणित बीज का प्रयोग करना चाहिये। बुवाई के पूर्व खोद के निकाले गये रोगी कंदों को जलाकर नष्ट कर देना चाहिये। कंद लगाते समय 4 से 5 किलोग्राम प्रति एकड़ की दर से ब्लीचिंग पाउडर उर्वरक के साथ कुंड में मिलायें। रोग दिखाई देने पर अमोनियम सल्फेट के रूप में देना चाहिये जो रोग जनक पर विपरीत प्रभाव डालते हैं।

सामान्य स्कैब या स्कैब रोग (Scab Disease) :– रोग फफूंद के वजह से होता है। इस रोग के प्रमुख लक्षण कंदो पर दिखाई पड़ता है। कंदों में हल्के भूरे रंग के

आलू की उन्नत खेती

फोड़े के समान स्कैब पड़ते है जो की कुछ उभरे और कुछ गहरे स्कैब दिखाई देता है जिसके कारण कंद खाने योग्य नही रह जाते।

नियंत्रण के उपाय :– प्रमाणित बीज का उपयोग करना चाहिये। बुवाई के पूर्व खोद के निकाले गये रोगी कंदों को जलाकर नष्ट कर देना चाहिये। बीज को लगाने से पूर्व डायथेन एम.–45 (2 से 2.5 ग्राम) अथवा कार्बेन्डाजिम (1 से 1.5 ग्राम) प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर कन्दों को 10 मिनट तक डुबोएँ।

काला मस्सा रोग (Black Wart Disease) :– यह रोग फफूंद की वजह से होता है। इस रोग के प्रमुख लक्षण कंदों पर दिखाई देता है। जिसमें भूरे से काले रंग के मस्सो की तरह उभार दिखाई देते हैं जिससे कंद खाने योग्य नही रह जाता है।

नियंत्रण के उपाय :– प्रमाणित बीज का उपयोग करना चाहिये। बुवाई के पूर्व खोद के निकाले गये रोगी कंदों को जलाकर नष्ट कर देना चाहिये। प्रतिरोधक जातियों का प्रयोग करना चाहिये।